क इस विचार से विकासवाद का [illegible]

4. विकासवाद

क्रम-क्रम से किसी एक रूप में नवीन रूप में परिवर्तित होने को विकास (Evolution) कहा जाता है। विंकासवाद के अनुसार विश्व का वर्तमान रूप क्रमिक परिवर्तनों का अर्थात् विकास का परिणाम है। विश्व परिवर्तनशील है। क्षण-प्रतिक्षण परिवर्तन हो रहा है। परिवर्तन वास्तविक है। इसलिए विश्व का जो रूप आज है, वह एकबारगी उत्पन्न नहीं हुआ, बल्कि धीरे-धीरे एक रूप से दूसरा रूप, दूसरे से तीसरा और इसी प्रकार परिवर्त्तन होते-होते विश्व का वर्त्तमान रूप हुआ है। इसलिए वर्त्तमान भूत का परिणाम है। यह क्रिया कभी रुकती नहीं। परिवर्त्तन हो रहा और होता रहेगा। इसलिए वर्त्तमान रूप से ही भविष्य रूप विकसित होगा। विकास-क्रिया निरन्तर चलनेवाली क्रिया है।

विश्व के सभी पदार्थ विकसित होते हैं। यह पदार्थों का सामान्य धर्म है। सभी पदार्थों में परिवर्त्तन एकाएक नहीं होता, बल्कि लगातार होता है। कोई पदार्थ यदि एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्त्तित हो जाता है तो उसकी दो अवस्थाओं के बीच कोई छुटाव नहीं रहता। विकास-क्रम अटूट होता है। यह एक क्रमिक क्रिया है।

विकासवाद के अनुसार विश्व की अभिव्यक्ति सूक्ष्म रूप से हो रही है। सरल रूप से धीरे-धीरे संसार में जटिलता आ रही है। इस प्रकार संसार की संकुलता बढ़ गई है और क्रम-

Scanned with CamScanner

तथा से उसकी उन्नति हुई है। अतः विकासवाद विकास-प्रक्रिया को सरल से जटिल रूप में प्रगति मानता है। ऐसा विचार प्राचीन ग्रीक दार्शनिक एम्पीडोक्लस, डीमोक्रीटस आदि का था। आज के कुछ ऐसे विचारक भी है, जिनके अनुसार विकास-क्रम सरल से जटिल और जटिल से सरल रूप की ओर भी अग्रसर होता है।

विकासवाद विश्व के पदार्थों में कोई मौलिक भेद नहीं विचारता। एक जाति से दूसरी जाति और उससे उसका कोई अन्य रूप हो जाता है। डार्विन ने मनुष्य को बंदरों का परिवर्तित या विकसित रूप माना है। इस प्रकार एक ही द्रव्य से सभी का विकास हुआ है। अतः उनमें मौलिक भेद नहीं है।

विकासवाद में सृष्टि किसने की या कैसे हुई या विश्व का भविष्य रूप क्या होगा आदि समस्याओं पर नहीं विचार किया जाता। इसमें केवल उस नियम का विचार किया जाता है, जिसके अनुसार विश्व का क्रमिक परिवर्त्तन हो रहा है। इसलिए विकासवाद एक पद्धति-सम्बन्धी विचार है।

विकासवाद तथा सृष्टिवाद

विश्व के सम्बन्ध में साधारणतः दो समस्याएँ हैं:—

(i) विश्व कैसे उत्पन्न हुआ?

(ii) विश्व का जो रूप आज है क्या आरम्भ से वही रूप है?

विकासवाद और सृष्टिवाद विरोधात्मक विचार प्रतीत होता हैं, पर वास्तव में दोनों में पूर्ण विरोध नहीं है। सृष्टिवाद ने ईश्वर को विश्व का स्रष्टा माना है। साधारणतः विकासवाद का इस प्रश्न से कोई सम्बन्ध नहीं है। विकासवादी ईश्वरवादी भी हो सकता है। विकासवाद ईश्वर के अस्तित्व का खण्डन नहीं करता। पर सृष्टिवाद के अन्य विचारों से विकासवाद का विरोध है। (i) सृष्टिवाद के अनुसार परिवर्त्तन अवास्तविक है पर विकासवाद के अनुसार यह वास्तविक है। (ii) सृष्टिवाद के अनुसार विश्व के सभी पदार्थों की एकबारगी सृष्टि हुई है। विकासवाद के अनुसार यह क्रिया क्रमिक है। (iii) सृष्टिवाद के अनुसार जो रूप आज विश्व का है, वही आरम्भ में भी था, पर विकासवाद के अनुसार विश्व का वर्त्तमान रूप परिवर्त्तनों के द्वारा हुआ है। (iv) सृष्टिवाद के अनुसार पदार्थों का भेद मौलिक है। वे एक-दूसरे से आरम्भ से ही भिन्न थे और इसीलिए भिन्न रहेंगे भी, पर विकासवाद के अनुसार वे सभी एक तत्त्व से विकसित हुए हैं। उनमें मौलिक भेद नहीं है। यह परिवर्त्तन भविष्य में भी होगा।

विकास-प्रक्रिया के लक्षण

विकसित होने की क्रिया में तीन विशेषताएँ मिलती हैं—(क) संयुक्तीकरण (Integration), (ख) विभेदीकरण (Differentiation) और (ग) निश्चयीकरण (Determination)।

(क) परिवर्त्तन संयुक्तीकरण से आरम्भ होता है। भिन्न तत्त्वों के एक साथ एकत्रित होने को संयुक्तीकरण कहा जाता है। आरम्भ में भिन्न-भिन्न तत्त्व बिखरे हुए थे। उनका संयोग हुआ और विकास की क्रिया आरम्भ हुई। इस प्रकार पृथ्वी, अन्य नक्षत्र, वनस्पति तथा जीव का विकास हुआ।

(ख) विकास-प्रक्रिया की दूसरी विशेषता है विभेदीकरण। अलग होने की क्रिया को विभेदीकरण कहा जाता है। संयुक्त होने के बाद उस संयुक्त तत्त्व में विभाजन आरम्भ होता

Scanned with CamScanner

है। गर्भ में जीवकोषों के मिलने के बाद जैसे-जैसे विकास होता है शरीर के अलग-अलग भाग स्फुरित होते जाते हैं।

(ग) निश्चयीकरण—विकास-क्रम में किसी भी पदार्थ का विभाजन होने पर वे विभक्त अंग नष्ट नहीं हो जाते। वे अलग होते हुए भी व्यवस्थित रहते हैं। शरीर के प्रत्येक अंग अलग होते हुए भी व्यवस्थित रहते है। इसे ही निश्चयीकरण कहा जाता है।

विश्व-प्रक्रिया की ये विशेषताएँ स्पेन्सर ने बतलायी हैं। इसे करीब-करीब सभी विकासवादी मानते हैं। सांख्यदर्शन में पुरुष और प्रकृति का संयोग, फिर अन्य तत्त्वों का विकास और उनमें व्यवस्था, करीब-करीब इसी विचार के समकक्ष हैं।

विकासवाद की समर्थक युक्तियाँ

क्रमिक परिवर्त्तन-प्रक्रिया को विकास कहा जाता है। विकासवाद सृष्टिवाद के इस विचार का, कि विश्व का वर्त्तमान रूप सृष्टि का परिणाम है, खंडन करता है। विश्व का वर्त्तमान रूप, जिसमें अनन्त प्रकार के जीव और निर्जीव रूप हैं, बहुत ही लम्बे अर्से के क्रमिक परिवर्त्तन या विकास का परिणाम है। इसे सिद्ध करने के लिए उन्होंने भिन्न वैज्ञानिक प्रमाणों की सहायता ली है:—

(i) ज्योतिषशास्त्र बतलाता है कि हमारे सूर्य-मण्डल और तारों को वर्त्तमान रूप में आने में बहुत समय लगा है। इसका निरीक्षण दूरबीन तथा अन्य यन्त्रों से किया गया है। गैस-रूप और तरल-रूप से ही नक्षत्र वर्त्तमान रूप में आये हैं। जैसे-जैसे किसी नक्षत्र या ग्रह का तापमान घटता है, वैसे-वैसे उसमें नये रासायनिक तत्त्वों का प्रादुर्भाव होता है और उस नक्षत्र में जटिलता आती जाती है। इससे यह सिद्ध होता है कि जो रूप आकाश-मंडल का आज है, वह पहले नहीं था। वर्त्तमान रूप विकास का फल है।

(ii) भूगर्भ-विज्ञान में पृथ्वी की सतहों के अध्ययन के आधार पर यह बतलाया गया है कि पृथ्वी भी तरल द्रव्य के रूप से ही भिन्न क्रमों से परिवर्त्तित होती हुई आज ठोस हुई है। भिन्न क्रमों के चिह्न सागर, पहाड़, नदियों तथा मिट्टियों में मिलते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि पृथ्वी का वर्त्तमान रूप विकास का परिणाम है।

(iii) जीव-विज्ञान ने भी जीव का क्रमिक विकास सिद्ध किया है। जीव का रूप पहले बहुत ही सरल था। धीरे-धीरे उसके शरीर में परिवर्त्तन होते-होते आज उसे हम अपने में जटिल रूप में पाते हैं। इससे भी विकासवाद की पुष्टि होती है।

(iv) शरीर-विज्ञान भिन्न प्राणियों की हड्डियों की तुलना कर यह बतलाता है कि मनुष्य और बन्दरों की हड्डियों में बहुत कम अन्तर है। इस प्रकार जीवों की हड्डियों को एक क्रमिक रूप में रखा जा सकता है। इससे यह सिद्ध होता है कि एक जाति दूसरी जाति का ही विकसित रूप है। एक जाति का दूसरी जाति में विकसित हो जाना जाति-विकास (Phylogenetic Evolution), और किसी व्यक्ति-विशेष के अंगों का विकास व्यक्ति-विकास (Ontogenetic Evolution) कहा जाता है। इससे विकासवाद की पुष्टि होती है।

(v) समाज-विज्ञान भी अन्य विज्ञानों की भाँति विकासवाद का ही समर्थन करता है। मानव-मस्तिष्क, व्यक्तिगत या सामाजिक, विकसित होता है। उसके विश्वास, नैतिक आदर्श तथा परिचलन बदलते रहते हैं। सामाजिक और राजनीतिक संस्थाएँ सरल रूप से जटिल होती जा रही हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि उनका विकास हो रहा है।

Scanned with CamScanner